प्रत्यंचा : इतिहास की पृष्ठभूमि से वर्तमान सामाजिक मूल्यों का प्रतिस्थापन

प्रीति सिंह
प्राध्यापिका
हिंदी विभाग
खांद्रा कॉलेज
आसनसोल, पश्चिम बंगाल, भारत

संजीव हिंदी साहित्य का एक जाना–पहचाना नाम है। अपनी रचनाधर्मिता में वे साधक, शोधकर्ता और अन्वेषक हैं. लगभग दो सौ से अधिक कहानियाँ, दर्जन से अधिक उपन्यास और साहित्य की अन्य विधाओं में उनके हस्त क्षेप उनकी यशस्विता प्रमाणित करते हैं. उनकी रचनाओं में भाषा–विन्यास शिल्प आदि मंत्र मुग्ध करते हैं. उनकी रचनाएँ शोध से होकर गुजरती है जो पाठकों को बांधती है। उनकी कहानियों और उपन्यासों के विषय भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि के होते हैं जो कई डायमेंन्शन्स लिए होते हैं तथा उनमें दुहराव नहीं मिलता. सर्वथा नवीन विषयों और सरोकारों से साहित्य को समृद्ध करने की कला संजीव के यहाँ बहुतायत में है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के प्रसंगों के सरोकारों को वर्तमान सामाजिक सन्दर्भ से जोड़कर

उसकी प्रासंगिकता का चित्रण संजीव के उपन्यास 'प्रत्यंचा' में परिलक्षित है।

महाराष्ट्र के कोल्हापुर में सन 1894–1922 (28 वर्ष) तक के शासनकाल में छत्रपति शाहूजी महाराज नाम के एक विलक्षण राजा ने शासन किया. इस अभूतपूर्व साहसी पुरुष के नेतृत्व और पराक्रम का न सिर्फ कोल्हापुर बल्कि अन्य राज्य, यहाँ तक कि अंग्रेजों ने भी लोहा माना. इतिहास के पन्नों को पलटते हुए कई ऐसे समाज सुधारक मिल जाते हैं जिन्होंने सामाजिक विसंगतियों जैसे– जातिवाद, धर्म, कर्मकांड, बाह्याडम्बर आदि के विरुद्ध आन्दोलन किया, और उसे दूर करने का प्रयत्न किया किन्तु शायद ही कोई ऐसा शासक हो इतिहास में जिसने अपने समाज को जातिवाद से मुक्त किया. शाहूजी का चरित्र किसी भी प्रशासक के लिए प्रेरणा स्त्रोत है और ऐसे चरित्र को बड़ी ही तन्मयता के साथ इस उपन्यास में उतार कर संजीव ने एक नवोन्मेष की जोत जलाई है।

शाहूजी के चरित्र के साथ–साथ उनके सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यों को संजीव ने इस उपन्यास में बड़ी ही संजीदगी के साथ प्रतिष्ठित किया है। शाहूजी ने अपने शासनकाल में कई महत्वपूर्ण कार्य किये. 1902 में समाज के गैर–ब्राह्मण समाज के लिए आरक्षण की बात सर्वप्रथम उन्होंने ही की. उन्होंने कोल्हापुर राज्य में सर्वप्रथम गैर–ब्राह्मणों के लिए शिक्षा को अनिवार्य किया तथा उनके लिए छात्रावास भी बनाए. महिलाओं और अन्य धर्मों की शिक्षा के लिए भी कार्य किया. इतिहास में सम्भवतः यह पहली बार देखा गया कि

किसी राजा ने स्वयं को अपने राष्ट्र के लिए पूर्णतः समर्पित करते हुए इतना बड़ा सामाजिक परिवर्तन किया. उन्होंने समाज के भाल पर सदियों से हावी धर्म और जातिवाद को जड़ से उखाड़ फेंका और मानवीय धर्म की प्रतिस्थापना की. पूरे देश के शासनकाल का यह एक ऐसा समय रहा जहाँ एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ. शाहूजी ने अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तकनीकी प्रयोग से अपने राज्य को विकसित किया. उन्होंने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में विकास लाया, चाहे वह कला हो, विज्ञान हो, साहित्य हो, समाज हो, प्रत्येक क्षेत्र की छोटी–छोटी विसंगतियों को दूर करते हुए नवीन मूल्यों की स्थापना की. शस्त्र की लड़ाई तो प्रत्येक राजा ने अपने शासन काल में लड़ी है, किन्तु शास्त्र की लड़ाई एक मात्र शाहू जी ने लड़ी. वास्तव में शाहूजी ने अपनी सत्ता और शक्ति का प्रयोग मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में किया, इसलिए उनके कार्य सराहनीय और प्रेरक है। संजीव ने शाहू जी के चरित्र की विभिन्न विशिष्टताओं के उतार–चढ़ाव को बहुत ही बारीकी से उपन्यास में उद्घाटित किया है। प्रत्यंचा का शिल्प विन्यास भी उनके अन्य उपन्यासों से भिन्न है। 'प्रत्यंचा' उपन्यास की कथावस्तु भूतकालीन भारतीय समाज की विद्रूपता से होती हुई वर्तमान समय में भी इस विसंगति से मुक्ति की बाट जोह रही है। जातिवाद के जहर से मुक्ति का प्रयास इतिहास में शाहू जी ने किया और आज भी यह हमारे समय में प्रासंगिक है। इसे समूल नष्ट किये जाने की वकालत 'प्रत्यंचा' का मूल स्वर है।

'प्रत्यंचा' के माध्यम से संजीव ने सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक प्रगति की कथा बुनी है। एक राजा के राजधर्म को प्रतीक बना कर उन्होंने सामाजिक आंदोलन को विमर्श के केंद्र में खड़ा किया है। यह हमें बाध्य करती है कि दकियानूस सामाजिक परिस्थितियाँ हमें सहस्त्राब्दियाँ पीछे ले जाती है। हमें जातिवाद, अशिक्षा, अज्ञानता, भेदभाव, अस्पृश्यता, अकर्मण्यता जैसी असाध्य क्रोनिक डिजीज से पूर्णतः मुक्त होने की आवश्यकता है। ज्ञान–विज्ञान पर आधारित समाज की रचना कर प्रगति पथ का वरन करना ही मानवीय विकास की पराकाष्ठा का सूचक है। हमें हर हाल में विज्ञान के साथ खड़ा होकर नवीन सामाजिक मूल्यों की स्थापना का स्वप्न साकार करना है। यही बातें 'प्रत्यंचा' की मूल भावना है।

'प्रत्यंचा' शाहू जी महाराज के माध्यम से एक राजा के सामाजिक संघर्ष को उद्घाटित करती है। ऐसा शासक समाज में नजीर बन इतिहास की धरोहर कहलाता है। शाहू जी महाराज ने कोल्हापुर में शासन–प्रशासन की जिस व्यवस्था को बहाल किया, वह समतामूलक समाज की स्थापना को बल प्रदान करता है। इसे हम आधुनिक समाज में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक क्षत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन के सूचक के रूप में देखते हैं. एक ऐसे समय व समाज में सामाजिक परिवर्तन की बयार 'प्रत्यंचा' में बहती परिलक्षित होती है, जो दुर्लभ प्रयोग कही जा सकती है इसने एक शासक के सामाजिक न्याय की प्रतिबद्धता को स्थापित किया।

वस्तुतः 'प्रत्यंचा' उपन्यास संजीव की ऋणमुक्ति में वर्तमान समाज की विसंगतियों से मुक्ति का आह्वाहन है। उपन्यास ने जो दिशा दिखाई है वही इस मुक्ति का अंतिम मार्ग है। जातिवाद, अशिक्षा, धार्मिक आडम्बर जैसी विसंगतियाँ सामाजिक उत्थान का मार्ग अवरूद्ध करती है। अतः ऐसे कुकृत्य से समाज को मुक्त करना आवश्यक है। विज्ञान का अवलम्बन कर कर्म पथ पर भेदभाव, गैर बराबरी व असमानता से परे नवीन मूल्यों की स्थापना का स्वप्न अपेक्षित है। 'प्रत्यंचा' की मूल भावना और स्वर इसी बात की ताकीद करता है।